भारत- पाकिस्तान विभाजन

भारत- पाकिस्तान विभाजन अठारहवीं सदी में यूरोप, एशिया, अफ्रीका और मध्य पूर्व में किए गए अनेक विभाजनों में से एक है। प्रायः अधिकांश विभाजनों में जिस तरह विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच जितनी हिंसा हुई, उससे कहीं अधिक हिंसा इस विभाजन में हुई। साम्राज्यशाही ब्रिटेन द्वारा किया गया भारत का यह विभाजन उसके द्वारा किए गए चार विभाजनों में से एक है। उसने आयरलैंड, फिलिस्तीन और साइप्रस के भी विभाजन कराए। उसने इन विभाजनों का कारण यह बताया कि अलग-अलग समुदायों के लोग एक साथ मिलकर नहीं कर सकते। जबकि इन विभाजनों के पीछे केवल धार्मिक और नस्ली कारण नहीं थे, बल्कि ब्रिटेन के सामरिक और राजनीतिक हित भी शामिल थे, जिनके आधार पर समझौतों के समय उसने अपनी रणनीति बनाई और चालें चलकर विभाजन कराए।

1947 में भारत का विभाजन बीसवीं सदी की सबसे दुखांत घटना थी, जिसके जख्म अभी तक नहीं पुरि। इसके कारण चार पीढियों की मानसिकता आहत हुई। क्यों हुआ यह बंटवारा? कौन इसके लिए उत्तरदायी थे-जिन्दा, कांग्रेस पार्टी अथवा अंग्रेज? जवाहरलाल नेहरू मानते थे कि भारत में केवल दो ही पक्ष हैं। कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार। उन्होंने मुस्लिम लीग के तर्कों को मिथ्या और अवास्तविक माना। शशि थरूर ने अपनी पुस्तक 'अंधकार काल- भारत में ब्रिटिश साम्राज्य' में 1937 के चुनाव से उत्पन्न विषम परिस्थितियों का वर्णन इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 'नेहरू को यह विश्वास नहीं था कि देश का विभाजन अपरिहार्य है।' इतिहासकार ताराचंद का मत है कि 'मुस्लिम लीग मुसलमानों के हितों का संरक्षण चाहती थी, जिस पर मतभेद था। जवाहरलाल नेहरू ने पूछा कि ये हित कौन से हैं। ये या तो सांस्कृतिक या धार्मिक या राजनीतिक थे।' वे इसे ही विस्तार से लिखते हैं कि 'सांस्कृतिक और धार्मिक हितों के विषय में कांग्रेस का स्पष्ट दृष्टिकोण क्या है। उसे वह कई बार गंभीरतापूर्वक सूचित करती थी कि संविधान में उनको इस प्रकार सुरक्षित किया जाएगा कि मुसलमानों को पूरा संतोष हो'। 'राजनैतिक हितों के विषय में जवाहरलाल नेहरू का यह विचार था कि वे मुख्यतः आर्थिक हित हैं जिनका संबंध धन के उत्पादन और वितरण से है।वे सारे भारतीयों पर समान रूप से लागू होते हैं, उनका धर्म, सामाजिक और सांस्कृतिक भेद से कोई संबंध नहीं है। इसलिए सम्प्रदाय के आधार पर उनमें कोई भेद नही किया जा सकता। सामान्य अधिकारों के अतिरिक्त ऐसे कोई विशेष अर्थिक अधिकार नहीं हो सकते जिनके लिए विशेष संवैधानिक या कानूनी संरक्षणों की आवश्यकता हो। सब प्राथमिक उत्पादकों की अर्थात किसानों की, कारखानों में काम करने वालों की, व्यापारियों और उद्योगपतियों की समस्याएं एक जैसी थी।'

दूसरी तरफ मुस्लिम लीग के नेता इस विषय के दार्शनिक तत्व को नहीं देख पाते थे। उनका दृष्टिकोण यह था कि आर्थिक क्षेत्र से राजनैतिक क्षेत्र अधिक बड़ा है। राजनैतिक क्षेत्र धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्र से भिन्न है। राजनैतिक शक्ति का सार वे सत्ता में पाते थे। उसको मुस्लिम समाज के

सामाजिक, आर्थिक और राष्ट्रीय मामलों पर निर्णय करने की शक्ति चाहते थे। इस दृष्टिकोण भिन्नता ने टकराव का रुख लिया। मुस्लिम लीग ने यह समझ लिया था कि कागजी संविधान में या संवैधानिक धाराओं में शक्ति नहीं होती। 1936 में जिन्ना ने जमायत-उल-उलमा से स्पष्ट कहा था कि समस्या मुख्यत: राजनैतिक है। धर्म, संस्कृति, भाषा या व्यक्तित्व के प्रश्न मूल नहीं है। जिन्ना की यह दृष्टि भी कांग्रेस से टकराव का कारण बनी। कांग्रेस और मुस्लिम लीग में बात कहां, कैसे और क्यों बिगड़ी? इसे संवैधानिक विकास के इतिहास में ढूंढ सकते हैं। पत्रकार दुर्गा दास की पुस्तक 'भारत, कर्जन से नेहरू और बाद' उस समय की साक्षी देती है। जिसके बारे में डॉ जाकिर हुसेन ने लिखा कि इसमें इतिहास को स्पष्टता और वस्तुपरकता से प्रस्तुत किया गया है। दुर्गा दास ने लिखा है कि जो विवाद उत्तर प्रदेश के चुनाव से शुरू हुआ वह भारत विभाजन में परिवर्तित हो गया। 1937 और 1939 के बीच मुस्लिम लीग को यह विश्वास नहीं रहा कि संरक्षणों या आरक्षणों या अन्य संवैधानिक युक्तियों के द्वारा ध्येय की प्राप्ति हो सकती है। 1937 के चुनाव परिणाम में मुस्लिम लीग ने देख लिया था। विवाद की टेढ़ी-मेढ़ी कहानी में उत्तर प्रदेश के रफी अहमद किदवई की बड़ी भूमिका रही। रफी अहमद किदवई मोतीलाल नेहरू के निजी सचिव और कांग्रेस के कर्ताधर्ता थे।

भारत के विभाजन का प्रस्ताव गोपालाचारी, राजेंद्र प्रसाद, पटेल, नेहरू द्वारा समर्पित था एवं यह आसानी से कांग्रेस कार्यकारिणी में पास भी हो गया। इस बैठक में गांधी ने बँटवारे का विरोध किया था। मगर इसके बाद बिरला-टाटा-पुरुषोत्ताम दास ग्रुप ने दबाव बनाया कि यदि बँटवारा मंजूर नहीं होता है तब लियाकत अली खान वित्तमन्त्री हम हिंदुओं को बजट के जरिए भारी टैक्स लगाकर गरीब बना देंगे और लियाकत अली खान समाजवादी बजट बतलाकर नेहरू की बोलती बंद कर देगा - अत: हिंदुओं का हित बँटवारे में है। पटेल इस पर सहमत हो गए। गोपालाचारी, राजेंद्र प्रसाद पहले ही से इसके पक्ष में थे - पटेल ने अपनी प्रधानमन्त्री की दावेदारी वापस ले कर नेहरू को भी खंडित पर समाजवादी भारत सत्ता के शीर्ष पर बैठकर बनाने की खुली छूट दे दी। नेहरू की दुविधा अब समाप्त हो गई। वे भी पटेल के साथ हो गए।

कांग्रेस वर्किंग कमिटी की बैठक के बाद गांधी ने भी हिंदू पूँजीपतियों की चीख को शक्ति से सुना। जब माउंटबेटन ने संभावित किसान क्रांति या सैनिक क्रांति का भय गांधी को दिखलाया तब गांधी की दुविधा भी समाप्त हो गई। यह सारी बात पूर्व मन्त्री एन.बी. गाडगिल की पुस्तक 'इनसाइड दी गवर्नमेंट' में वर्णित है। गांधी ने मैनचेस्टर और लंकाशायर के पूँजीपति वर्ग के एक हिस्से को आश्वस्त किया कि हमारा स्वदेशी आंदोलन आपके मुनाफा के प्रतिकूल नहीं है। अखिर तकनीक, इंजीनियर, कारखाने की मशीन तो हम आपसे ही लेंगे। इस तरह आपको डरने की जरूरत नहीं है। जनता के विद्रोह से मुस्लिम लीग, अंग्रेज, कांग्रेस, समाजवादी, रिपब्लिकन, दलित वर्ग संघ सभी भयभीत थे। विद्रोह सफल होने के पूर्व अंग्रेज अपने मातहतों के हाथ देश जिम्मा लगाना चाहते थे। सुभाष के लापता होने से विद्रोह को नायक नहीं मिल रहा था। भारत के समस्त बाबू वर्ग को बँटवारे पर अंग्रेजों ने सहमत कराया। जिन्ना के पास नौकरशाह मुहम्मद अली चौधारी, पटेल के घर नौकरशाह वी.पी. मेनन, गांधी की प्रार्थना में अपनी

पुत्रियां, नेहरू के यहाँ पत्नी एडविना भेजकर माउंटबेटन सभीको नजर में रखे थे क्यूं सब उनकी धुन पर थिरक रहे थे। आखिर माउंटबेटन सफल हो गए।

14 जून 1947 को कांग्रेस महासमिति की बैठक हुई। बैठक में बँटवारे का प्रस्ताव पंत जी ने रखा। बँटवारे का विरोध गफ्फार खान, गोपीनाथ वारदोलई, चौथराम मिडवानी, डॉ. किचलु, पुरुषोत्ताम दास टंडन, स्वामी सहजानन्द, मौलाना हफीजुर्रहमान इत्यादि ने किया। कुल 161 व्यक्ति बँटवारे के समर्थन के खिलाफ थे। पंतका प्रस्ताव गिर गया। तब, ऐसी हालत में गांधी ने हस्तक्षेपकिया। बँटवारे के पक्ष में वकील गांधी ने दलील पर दलील देकर प्रस्ताव पुन: रखा गांधी ने प्रस्ताव स्वीकार करने की सलाह दी और फरमाया - 'विभाजन पर कार्य समिति के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देना या उसमें संशोधन करना आप लोगों के लिए अनुचित होगा। ...आपका यह कर्तव्य है कि आप कार्य समिति का समर्थन करें...देश के सब पक्षों ने विभाजन की योजना को मान लिया है। अतएव कांग्रेसके लिए अपनी बात से मुकर जाना ठीक नहीं होगा। ...मैं आपके सामने प्रस्ताव स्वीकार करने का अनुरोध करने आया हूँ। जो लोग देश में तुरंत क्रांति या उथल-पुथल होनेकी दृष्टि से बात करते हैं वे यह ध्येय तो इस प्रस्ताव को ठुकरा कर पूरा कर सकेंगे। लेकिन, मुझे इसमें यह संदेह है कि उनमें कांग्रेसकी और सरकार की बागडोर सँभालनेकी शक्ति है या नहीं.. (गांधी के आप्त सचिव प्यारेलाल, नवजीवन प्रेस - पूर्णाहुति तीसरा खण्ड) बँटवारे के सवाल पर फिर वोट हुए। जयप्रकाश-लोहिया गुट ने गांधी को मदद किया। प्रस्ताव पास हो गया। फिर भी गफ्फार खान, स्वामी सहजानन्द इत्यादि उपरोक्त नमित सभी व्यक्ति अन्त तक विरोध में डटे रहे।

भारत का विभाजन माउंटबेटन योजनाके आधार पर निर्मित भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के आधार पर किया गया। इस अधिनियम में काहा गया कि 15 अगस्त 1947 को भारत व पाकिस्तान अधिराज्य नामक दो स्वायत्त्योपनिवेश बना दिए जाएंगें और उनको ब्रिटिश सरकार सत्ता सौंप देगी. भारत के विभाजन के ढांचेको '3 जून प्लान' या माउण्टबैटन योजना का नाम दिया गया। भारत और पाकिस्तान के बीचकी सीमारेखा लंदनके वकील सर सिरिल रैडक्लिफ ने तय की। हिन्दू बहुमत वाले इलाके भारत में और मुस्लिम बहुमत वाले इलाके पकिस्तान में शामिल किए गए। अंग्रेजोंने योजनाबद्ध रूप से हिन्दू और मुसलमान दोनों संप्रदायों के प्रति शक को बढ़ावा दिया। मुस्लिम लीग ने अगस्त 1946 में सिधी कार्यवाही दिवस मनाया और कलकत्ता में भीषण दंगेकिये जिसमें करीब 5000 लोग मारे गये और बहुत से घायल हुए। ऐसे माहौल में सभी नेताओंपर दबाव पड़ने लगा कि वे विभाजन को स्वीकार करें तकि देश पूरी तरह युद्धकी स्थिति में न आ जाए।

18 जुलाई 1947 को ब्रिटिश संसद ने भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित किया जिसमें विभाजन की प्रक्रिया को अंतिम रूप दिया गया। इस समय ब्रिटिश भारत में बहुत से राज्य थेजिनके राजाओंके साथ ब्रिटिश सरकार ने तरह-तरह के समझौतेकर रखे थे। इन565 राज्यों को आज़ादी दी गयी कि वे चुनें कि वे भारत या पकिस्तान किस में शामिल होना चाहेंगे। अधिकतर राज्यों ने बहुमत धर्म के आधार पर

देश चुना।जिन राज्यों के शासकों ने बहुमत धर्म के अनुकूल देश चुना उनके एकीकरण में काफ़ी विवाद हुआ। विभाजन के बाद पकिस्तान को संयुक्त राष्ट्र में नए सदस्य के रूप में शामिल किया गया और भारत ने ब्रिटिश भारत की कुर्सी संभाली।

स्वतंत्रता के साथ ही 14 अगस्त को पाकिस्तान अधिराज्य (बाद में इस्लामी जम्हूरिया ए पाकिस्तान) और 15 अगस्त को भारतीय संघ (बाद में भारत गणराज्य) की संस्थापना की गई। इस घटनाक्रम में मुख्यतः ब्रिटिश भारत के बंगाल प्रांत को पूर्वी पाकिस्तान और भारत के पश्चिम बंगाल राज्य में बाँट दिया गया और इसी तरह ब्रिटिश भारत के पंजाब प्रांत को पश्चिमी पाकिस्तान के पंजाब प्रांत और भारत के पंजाब राज्य में बाँट दिया गया। 15 अगस्त 1947 की आधी रात को भारत और पाकिस्तान कानूनी तौर पर दो स्वतंत्र राष्ट्र बने। लेकिन पाकिस्तान की सत्ता परिवर्तन की रस्में 14 अगस्त को कराची में की गईं ताकि आखिरी ब्रिटिश वाइसराय लुइस माउंटबैटन, करांची और नई दिल्ली दोनों जगह की रस्मों में हिस्सा ले सकें। इसलिए पाकिस्तान में स्वतंत्रता दिवस 14 अगस्त और भारत में 15 अगस्त को मनाया जाता है।

भारत के विभाजन से करोड़ों लोग प्रभावित हुए। विभाजन के दौरान हुई हिंसा में करीब 5 लाख लोग मारे गए और करीब 1.45 करोड़ शरणार्थियों ने अपना घर-बार छोड़कर बहुमत संप्रदाय वाले देश में शरण ली। भारत के ब्रिटिश शासकों ने हमेशा ही भारत में "फूट डालो और राज्य करो" की नीति का अनुसरण किया। उन्होंने भारत के नागरिकों को संप्रदाय के अनुसार अलग-अलग समूहों में बाँटकर रखा। उनकी कुछ नीतियाँ हिन्दुओं के प्रति भेदभाव करती थीं तो कुछ मुसलमानों के प्रति। 20वीं सदी आते-आते मुसलमान हिन्दुओं के बहुमत से डरने लगे और हिन्दुओं को लगने लगा कि ब्रिटिश सरकार और भारतीय नेता मुसलमानों को विशेषाधिकार देने और हिन्दुओं के प्रति भेदभाव करने में लगे हैं। इसलिए भारत में जब आज़ादी की भावना उभरने लगी तो आज़ादी की लड़ाई को नियंत्रित करने में दोनों संप्रदायों के नेताओं में होड़ रहने लगी।

ब्रिटिश भारत की संपत्ति को दोनों देशों के बीच बाँटा गया लेकिन यह प्रक्रिया बहुत लंबी खिंचने लगी। गांधीजी ने भारत सरकार पर दबाव डाला कि वह पाकिस्तान को धन जल्दी भेजे जबकि इस समय तक भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध शुरु हो चुका था और दबाव बढ़ाने के लिए अनशन शुरु कर दिया। भारत सरकार को इस दबाव के आगे झुकना पड़ा और पाकिस्तान को धन भेजना पड़ा।२२ अक्टूबर 1947 को पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया, उससे पूर्व माउण्टबैटन ने भारत सरकार से पाकिस्तान सरकार को 55 करोड़ रुपये की राशि देने का परामर्श दिया था। केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल ने आक्रमण के दृष्टिगत यह राशि देने को टालने का निर्णय लिया किन्तु गान्धी ने उसी समय यह राशि तुरन्त दिलवाने के लिए आमरण अनशन शुरू कर दिया जिसके परिणामस्वरूप यह राशि पाकिस्तान को भारत के हितों के विपरीत दे दी गयी। नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी के इस काम को उनकी हत्या करने का एक कारण बताया।

बहुत से विद्वानों का मत है कि ब्रिटिश सरकार ने विभाजन की प्रक्रिया को ठीक से नहीं संभाला। चूंकि स्वतंत्रता की घोषणा पहले और विभाजन की घोषणा बाद में की गयी, देश में शांति कायम रखने की जिम्मेवारी भारत और पाकिस्तान की नयी सरकारों के सर पर आई। किसी ने यह नहीं सोचा था कि बहुत से लोग इधर से उधर जाएंगे। लोगोंका विचार था कि दोनों देशों में अल्पमत संप्रदायके लोगोंके लिए सुरक्षा का इंतज़ाम किया जाएगा। लेकिन दोनों देशों की नयी सरकारों के पास हिंसा और अपराध से निबटने के लिए आवश्यक इंतज़ाम नहीं था। फलस्वरूप दंगा फ़साद हुआ और बहुत से लोगोंकी जाने गईं और बहुत से लोगोंको घर छोड़कर भागना पड़ा। अंदाज़ा लगाया जाता है कि इस दौरान लगभग 5 लाख से 30 लाख लोग मारे गये, कुछ दंगोंमें, तो कुछ यात्रा की मुश्किलों से।

आलोचकों का मत है कि आजादी के समय हुए नरसंहारव अशांति के लिये अंग्रेजोंद्वारा समय पूर्व सत्ता हस्तान्तरण करने की शीघ्रता व तात्कालिक नेतृत्वकी अदूरदर्शिता उत्तरदायी थी। विभाजन के बाद के महीनोंमें दोनोंनये देशों के बीच विशाल जन स्थानांतरण हुआ। पकिस्तान में बहुत से हिन्दुओं और सिखों को बलात् बेघरकर दिया गया। लेकिन भारत में गांधीजी ने कांग्रेस पर दबाव डाला और सुनिश्चित किया कि मुसलमान अगर चाहें तो भारत में रह सकें। सीमा रेखाएं तय होनेके बाद लगभग 1.45 करोड़ लोगों ने हिंसा के डर से सीमा पारकरके बहुमत संप्रदायके देश में शरण ली। भारत की जनगणना 1951 के अनुसारविभाजन के एकदम बाद 72,26,000 मुसलमान भारत छोड़कर पाकिस्तान गये और 72,49,000 हिन्दू और सिख पाकिस्तान छोड़कर भारत आए। इसमें से 78 प्रतिशत स्थानांतरण पश्चिम में, मुख्यतया पंजाब में हुआ।

ये सच है कि मुस्लिम लीग ने अलग देश की माँग की थी और उनकी ये माँग पूरी हो गई,यही वजह है कि विभाजन का पूरा दोष मुसलमानोंपर डाल दिया गया, लेकिन ऐसा नहीं है सभी मुसलमानविभाजन के पक्ष में थे या केवल मुसलमान ही इसके लिए ज़िम्मेदार थे. मौलाना आज़ाद और ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ान विभाजन के सबसे बड़े विरोधी थे और उन्होंने इसके ख़िलाफ़ पुरज़ोर तरीक़े से आवाज़ उठाई थी, लेकिन उनके अलावा इमारत-ए-शरिया के मौलाना सज्जाद, मौलाना हाफ़िज़-उर-रहमान, तुफ़ैल अहमद मंगलौरी जैसे कई और लोग थे जिन्होंने बहुत सक्रियता के साथ मुस्लिम लीग की विभाजनकारी राजनीति का विरोध किया था.

इतिहासकार उमा कौरा ने लिखा है कि विभाजन की रेखा तब गहरी हो गई जब 1929 में मोतीलाल नेहरू कमेटी की सिफ़ारिशों को हिंदू महासभा ने मानने से इनकार कर दिया. मोतीलाल नेहरू कमेटी ने अन्य बातों के अलावा इस बात की भी सिफ़ारिश की थी कि सेंट्रल एसेम्बली में मुसलमानों के लिए 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित हों. आयशा जलाल ने लिखा है कि 1938 आते-आते जिन्ना मुसलमानों के 'अकेले प्रवक्ता' बन गए क्योंकि वे ही उनकी माँगों को ज़ोरदार तरीक़े से उठा रहे थे. दूसरी ओर, इतिहासकार चारू गुप्ता ने लिखा है, "कांग्रेसके भीतर के हिंदूवादी और हिंदू महासभा के नेता जिस तरह 'भारत माता, मातृभाषा और गौमाता' के नारे लगा रहे थे उससे बहुसंख्यक वर्चस्व का माहौल बन रहा था" जिसमें मुसलमानोंका ख़ुद को असुरक्षित समझना अस्वाभाविक नहीं था. ये भी ग़ौर करने की

बात है कि 1932 में गांधी-आंबेडकर के पुणे पैक्ट के बाद जब 'हरिजनों' के लिए सीटें आरक्षित हुईं तो सवर्णों और मुसलमानों, दोनों में बेचैनी थी कि उनका दबदबा कम हो जाएगा.

इतिहासकार जोया चटर्जी का कहना है कि 1932 के बाद बंगाल के हिंदू-मुसलमानों का टकराव बढ़ता गया जो विभाजन की भूमिका तैयार करने लगा. दरअसल, 1905 में धर्म के आधार पर बंगाल का विभाजन करके अंग्रेज़ों ने विभाजन की नींव तैयार कर दी थी. वे लिखती हैं, "पूर्वी बंगाल में फ़ज़ल उल-हक़ की 'कृषि प्रजा पार्टी' का असर बढ़ा और पूना पैक्ट के बाद 'हरिजनों' के लिए सीटें आरक्षित हुईं जिसका असर ये हुआ कि सवर्ण हिंदुओं का वर्चस्व घटने लगा, इसकी उन्होंने कल्पना नहीं की थी. इसका नतीजा ये हुआ है कि बंगाल के भद्रजन ब्रिटिश विरोध के बदले, मुसलमान विरोधी रुख़ अख़्तियार करने लगे." विलियम गोल्ड ने लिखा है कि उत्तर प्रदेश में कांग्रेस के बड़े नेताओं-पुरुषोत्तम दास टंडन, संपूर्णानंद और गोविंद बल्लभ पंत--का झुकाव हिंदूवाद की ओर था जिसकी वजह से मुसलमान अलग-थलग महसूस कर रहे थे. मगर दूसरी ओर ये भी सच है कि विभाजन में उत्तर प्रदेश के मुसलमानों की सांप्रदायिकता की भूमिका भी कम नहीं थी. फ्रांसिस रॉबिनसन और वेंकट धुलिपाला ने लिखा है कि "यूपी के ख़ानदानी मुसलमान रईस और ज़मींदार समाज में अपनी हैसियत को हमेशा के लिए बनाए रखना चाहते थे" और उन्हें लगता था कि हिंदू भारत में उनका पुराना रुतबा नहीं रह जाएगा.

मुशीरुल हसन, पापिया घोष और वनिता दामोदरन जैसे अनेक इतिहासकारों ने लिखा है कि 1937 में कांग्रेस के नेतृत्व में जब सरकार बनी तो हिंदू और मुसलमान, दोनों ओर के सांप्रदायिक तत्वों में सत्ता का बड़ा हिस्सा हथियाने की होड़ लग गई जो 1940 के बाद लगातार कटु होती गई. जब कांग्रेस से जुड़े मुसलमान ख़ुद को अलग-थलग महसूस करने लगे तो जिन्ना की मुस्लिम लीग ने अपनी राजनीति चमकाने के लिए इसका पूरा फ़ायदा उठाया. ग़ौर करने की बात है कि अँगरेज़ों ने मुस्लिम लीग और हिंदू महासभा दोनों को बढ़ावा दिया क्योंकि वे उनसे नहीं लड़ रहे थे, जबकि 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान लगभग सभी बड़े कांग्रेसी नेताओं को जेल में डाल दिया गया था, ऐसे में लीगी महासभाई तत्वों की बन आई. अगर आप समझते हैं कि मुस्लिम लीग और हिंदू महासभा के बीच कोई झगड़ा था तो आपको ज़रूर जानना चाहिए कि जब कांग्रेस के नेता जेल में थे तो बंगाल, सूबा सरहद और सिंध में मिलकर सरकारें चला रहे थे जिससे उनकी सांप्रदायिक राजनीति मज़बूत हुई, साथ ही गांधी-नेहरू ने जो हिंदू-मुस्लिम एकता की बुनियाद रखी थी वो कमज़ोर हो गई.

समाजवादी नेता डॉ. राम मनोहर लोहिया की किताब ‘भारत विभाजन के गुनहगार’ ('गिल्टी मेन ऑफ़ पार्टिशन') में इस बात का जिक्र आता है कि कई बड़े कांग्रेसी नेता जिनमें नेहरू भी शामिल थे वे सत्ता के भूखे थे जिनकी वजह से बँटवारा हुआ. लोहिया ने अपनी किताब में लिखा है कि पंडित जवाहर लाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल ने महात्मा गांधी को बंटवारे के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं दी थी. भारत विभाजन के बाद महात्मा गांधी की हत्या हुई. नाथूराम गोडसे ने गांधी की हत्या इसलिए कर दी क्योंकि कि गांधी ने भारत के विभाजन का वैसा विरोध नहीं किया, जैसा वो कर सकते थे.

नामी-गिरामी इतिहासकार बिपन चंद्रा ने विभाजन के लिए मुसलमानों की सांप्रदायिकता को ज़िम्मेदार ठहराया है जबकि कुछ इतिहासकारों का कहना है कि 1937 के बाद कांग्रेस मुसलमान जनमानस को अपने साथ लेकर चलने में नाकाम रही इसलिए विभाजन हुआ. कई इतिहासकारों का मानना है कि 1946 के बाद जब सांप्रदायिक हिंसा नियंत्रण से बाहर हो गई तो विभाजन के अलावा कोई विकल्प नहीं रह गया.इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अँगरेज़ी हुकूमत ने भी स्थिति को बद से बदतर बनाया, माउंटबेटन और रेडक्लिफ़ ने बँटवारे के मामले में बहुत जल्दबाज़ी दिखाई, पहले भारत की आज़ादी के लिए जून 1948 तय किया गया था, माउंटबेटन ने इसे खिसका कर अगस्त 1947 कर दिया गया जिससे भारी अफ़रा-तफ़री फैली और असंख्य लोगों की जानें गईं.

भारत में निर्वासित तिब्बती सरकार के धर्मगुरु परम पावन दलाईलामा का निजी विचार था कि यदि जवाहर लाल नेहरू मोहम्मद अली जिन्ना को भारत का प्रधानमंत्री मान लेते तो भारत विभाजन रुक सकता था। पूज्य दलाईलामा ने अपने इस कथन पर भारतवासियों से क्षमा भी मांग ली है लेकिन मान लो नेहरू जिन्ना को प्रधानमंत्री बनाने पर सहर्ष राजी भी हो जाते तो क्या भारत विभाजन रुक जाता? कभी नहीं। मोहम्मद अली जिन्ना तब भारत में रहने वाले मुसलमानों को जिस मुकाम पर ले आए थे, मुस्लिम लीग ने 3 जून, 1947 से पहले जो 'जेहाद' भारत में शुरू कर दिया था, उससे वह वापस नहीं आ सकते थे ।जसवंत सिंह ने इसका उत्तर खोजने की कोशिश की है-संभवत कोई निश्चित उत्तर हो नहीं सकता, फिर भी अपनी ओर से पूरी ईमानदारी से खोज की है, क्योंकि जिन्दा जो किसी समय हिन्दू मुस्लिम एकता के पैरोकार थे, कैसे भारत में मुसलमानों के एकमात्र प्रवक्ता बने और अंततः पाकिस्तान के निर्माता